किताबों की जादुई दुनिया में

चित्रः जितेन्द्र ठाकुर

वृषाली वैद्य

अगस्त महीने की बात है। 6 अगस्त, रविवार का दिन था। अगस्त माह के पहले रविवार को मित्रता दिवस मनाया जाता है। ऐसे खास दिन मनाने की मेरे दिल में बड़ी उमंग रहती है। आखिर, मनाना यानी क्या - अपने दोस्तों को याद से फोन करना, खत लिखना और फ्रैंडशिप डे की मुबारकबाद देना। यानी उन सबकी दोस्ती मेरे लिए काफी मायने रखती है, यह बात उन सब तक पहुँचाना।

ऐसे खास दिनों को मनाना चाहिए या नहीं, इस पर लोगों के खयालात भी जुदा-जुदा होंगे। मेरे घर में भी इसका अपवाद नहीं है। सुबह-सुबह मैंने अपने बेटे को फ्रैंडशिप डे की मुबारकबाद दी। उसी समय मेरे पति बोल पड़े, "अरे क्या बचकानी बात कर रही हो। ये सब बकवास बातें बच्चे को मत सिखाओ। दोस्ती सिर्फ एक ही दिन की होती है क्या?"

मेरा बेटा हक्का-बक्का होकर बारी-बारी से मुझे और अपने पिता को देखते हुए हमारे संवाद को सुनने लगा। इन दोनों में से कौन सही है और यह फ्रैंडशिप डे क्या बला है! और इसे मनाना यानी क्या - ऐसे कई सवाल मैं उसके चेहरे पर पढ़ पा रही थी। इसलिए उससे इस बारे में कुछ गपशप करना ज़रूरी हो गया था।

इस गपशप में मेरी मदद के लिए एक किताब 'शिन की ट्रायसाइकिल' हाथ लगी। मैं अपने बेटे पार्थो के साथ बैठकर यह किताब पढ़कर सुनाने लगी।

.... शिन जापान के हिरोशिमा शहर में रहता था। उसे तस्वीर में दिखाई देने वाली साइकिल जैसी असल साइकिल चाहिए थी। लेकिन शिन जानता था कि उसकी यह चाहत हकीकत में तब्दील नहीं हो पाएगी। ....

पार्थो ने तुरन्त पूछा, "ऐसा क्यों?"

"क्योंकि उस समय जापान की अमरीका और कुछ दूसरे देशों के साथ लड़ाई चल रही थी। ये लड़ाई चार साल तक चलती रही, और इस दौरान जापान में साइकिल, इबादतगाहों के घण्टे, लोगों के घरों के बर्तन आदि पिघलाकर उनसे बन्दूक और तोप-गाड़ियाँ बनाई जा रही थीं। बच्चों को खिलौने भी मुश्किल से मिल पाते थे।" ऐसा किताब में लिखा है, मैंने उसे बताया।

पार्थो ने कहा, "दिखाओ ऐसा कहाँ लिखा है?" और किताब में देखकर उसने मेरे द्वारा कही गई बात की तसल्ली कर ली। फिर किताब मेरे हाथ में देकर उसने उत्सुकता से पूछा, "हाँ, फिर आगे क्या हुआ?"

"एक दिन नौसेना में काम करने वाले उसके चाचा आए। और उन्होंने शिन को एक तीन पहिए वाली साइकिल तोहफे में दी। 6 अगस्त को शिन और उसकी सहेली घर के आंगन में साइकिल चला रहे थे। उसी समय हिरोशिमा शहर पर एटम बम गिराया गया। इस बम हादसे में शिन, उसकी दो बहनें और साइकिल के साथ खेल रही सहेली की मौत हो गई। मरते दम तक शिन ने साइकिल के हैंडिल को कसकर थामे रखा था। इस हादसे के तकरीबन 40 साल बाद शिन के पिता को खुदाई में जंग लगी हुई शिन की साइकिल मिलती है। वे शिन की साइकिल को हिरोशिमा के शान्ति संग्रहालय में लेकर गए। उन्हें भरोसा था कि साइकिल की यह कहानी दुनिया के सभी बच्चों के बीच

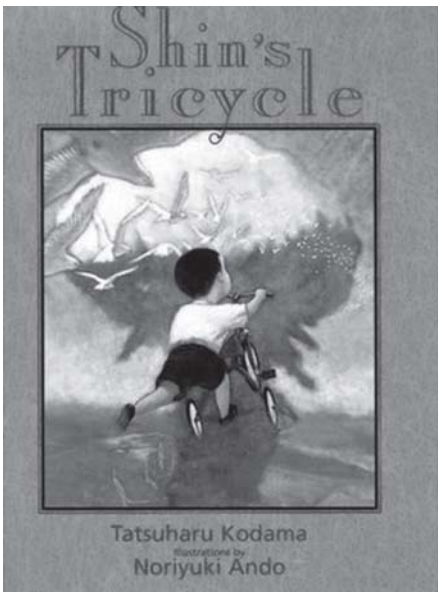

एक शान्तिदूत का काम करेगी।"

कहानी को आखिर तक पढ़कर सुनाने के बाद मैंने कहा, "देखो न! लड़ाई में हमेशा ही विनाश होता है। लड़ाई किसने शुरू की, इस बात के कोई मायने नहीं रह जाते। इसमें निर्दोष लोग मारे जाते हैं। खासकर, शिन जैसे छोटे बच्चे भी। इस तरह का अत्याचार दोबारा कभी न हो, दुनिया में सभी लोग एक-दूसरे के दोस्त बनकर रहें, यदि कोई दुश्मन नहीं होगा तो फिर लड़ाई किससे करेंगे? इसलिए अगस्त महीने के पहले रविवार को दोस्ती के दिन (फ्रैंडशिप डे) के रूप में मनाया जाता है।"

शिन-चान अपनी बड़ी बहन मिशिको-चान के साथ, 1944

यह सब सुनने के बाद पार्थो की आँखें डबडबा आईं। वह स्तब्ध-सा बैठा हुआ था, किन्हीं ख्यालों में खोया हुआ। उसकी भाँति मैं भी पूरे दिन विश्व-मैत्री के विचारों में खोई रही।

***

कभी-कभी बच्चों के साथ किताबें पढ़ने और साथ में गपशप करने से

हिरोशिमा के शान्ति संग्रहालय में रखी हुई शिन की साइकिल

काफी विशिष्ट और अन्तरंग अनुभव मिलते हैं।

बेटे के साथ माधुरी पुरंदरे की लिखी 'टकलू शेर की कहानी' (टकलू सिंहाची गोष्ट) किताब में से खरगोश की कहानी पढ़ रही थी। बाबुल खरगोश के घर में नन्हें बच्चे पैदा होने वाले थे। घर में छोटे बच्चे के आने की खबर के बाद भी बाबुल को खुशी नहीं होती। वह फिक्र में पड़ जाता है कि अब उसको खिलौनों व माँ के प्यार-दुलार में कमी के साथ खाने-पीने की चटर-मटर चीज़ें भी कम मिलेंगी क्योंकि इन सबमें अब आने वाला छोटा बच्चा हिस्सेदार हो जाएगा। यह सब सोचकर बाबुल दुखी है। उसकी माँ उसे समझाती है कि ऐसा कुछ भी नहीं होगा। यह सब सुनकर बाबुल खुशी-खुशी स्कूल चला जाता है।

यह कहानी सुनकर पार्थो ने मुझसे पूछा, "मैं तुम्हारे पेट में था क्या, कहाँ था, तुम्हारा पेट बड़ा हो गया था क्या?" यह सब पूछते हुए वो अचानक रोने लगा।

"क्या हुआ, क्यों रोने लगे?"

"माँ मुझे तुम्हारे पेट में रहना था। तुमने मुझे बाहर क्यों निकाला? मुझे फिर से पेट में रख दो।" इतना सब सुनने के बाद हतप्रभ होने की बारी मेरी थी।

पार्थो के कुछ और बड़े होने पर उसे सिर्योज़ा की कहानी पढ़कर सुनाई। सिर्योज़ा से उसके पिता पूछते हैं कि तुम्हें क्या लगता है, हमारे परिवार में पैदा होने वाला सदस्य कौन होना चाहिए, लड़का या लड़की? सिर्योज़ा कहता है लड़का। लेकिन मेरा बेटा पार्थो बहन के लिए पैरवी करता है। बहन क्यों, भाई क्यों नहीं? इस बातचीत के दौरान पार्थो ने मेरे पेट को हाथ से छूकर पूछा, "माँ तुम्हारा पेट खाली है क्या?"

"नहीं अभी तो हम लोगों ने खाना खाया था। मेरा पेट भरा हुआ है।" मैंने उसे जवाब दिया।

पार्थो ने कहा, "मेरे कहने का मतलब है कि तुम्हारे पेट में कोई बच्चा है क्या?"

"नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं है मेरे पेट में," मैंने तुरन्त कहा।

फिर हमारी बातचीत शुरू हुई अकेले बच्चे को होने वाली बोरियत, अकेलापन, सगे-चचेरे-मौसेरे भाई-बहनों पर।

***

अपने बच्चे से स्कूल के शुरुआती दिन से, आज स्कूल में क्या किया, सवाल का जवाब हमेशा एक-सा ही मिलता रहा - टिफिन खाया और सू-सू की।

कितना भी घुमा-फिराकर पूछो, जवाब यही मिलता था। इसलिए बच्चे के साथ बातचीत के विविध मुद्दे हमें किताबों से ही मिलते थे।

मुझे याद आता है पार्थो अभी हाल में ही स्कूल के दोस्त से एक नया गीत

सीखकर आया था। उस गीत की तीन पंक्तियाँ इस तरह थीं।

ताली दो ताली
तुम्हारी मूँछें काली
अब सण्डास की बारी

खेलते समय या यूँ ही फुर्सत के पल में भी वह इन पंक्तियों को गुनगुनाता रहता था। शुरू में हमने इसे गम्भीरता से नहीं लिया। सोचा कि दो-चार दिन में खुद-ब-खुद दिमाग से यह फितूर निकल जाएगा। हम अपने एक दोस्त के घर गए थे। पार्थो वहाँ भी इन्हीं पंक्तियों को गुनगुना रहा था। दोस्त की पत्नी ने इसे सुनकर अपने एक साल के बच्चे की ओर मुखातिब होकर कहा, "लगता है बड़ा होकर ये भी ऐसे ही झण्डे गाड़ने वाला है।"

दोस्त की पत्नी की टिप्पणी मुझे अन्दर तक चुभ गई। मैं चाहकर भी उसे भुला नहीं पा रही थी। मैंने पार्थो को डाँट लगाई, " ये सण्डास की बारी वगैरह क्या गाते रहते हो? अभी सुना न चाची क्या कह रही हैं?" मेरी बात सुनकर पार्थो का चेहरा दयनीय-सा हो गया।

घर पहुँचते-पहुँचते मेरा गुस्सा कम हो गया था। घर पहुँचकर हम फिर बातचीत के लिए बैठे। कक्षा छठवीं की हिन्दी की किताब में एक शानदार कहानी थी - चूड़ीवाले बाबा। यह कहानी उसे सुनाई। इस कहानी में चूड़ीवाले बाबा के पास गधी थी, जिसकी पीठ पर चूड़ी के थैले रखकर बाबा चूड़ियाँ बेचने जाते थे। रास्ते में वे गधी से बातें करते जाते थे। "आप थक तो नहीं गईं न, फिर जल्दी कीजिए।" लोग बाबा के गधी से संवाद सुनकर हँसते थे। गधी के लिए 'आप' संबोधन मज़ाक का विषय बन गया था। लोगों के कटाक्ष सुनकर चूड़ीवाले बाबा कहते थे, "भाई, मैं बहू-बेटियों को चूड़ियाँ पहनाता हूँ। उनसे बातचीत करते समय ज़रूरी है कि मैं अदब के साथ बात करूँ। मेरी ज़ुबाँ से कोई ऐसा-वैसा लफ्ज़ न निकले। यदि मैं अपनी गधी के साथ किसी गलत लहज़े और अलफाज़ में बात करूँगा तो गलती से वैसे ही अलफाज़ औरतों के साथ बातचीत के दौरान ज़ुबाँ पर आ सकते हैं। ऐसी गलती न हो इसलिए मैं गधी से प्यार और अदब से पेश आता हूँ।"

इस कहानी के बाद बच्चे के कुछ नए सवाल उठ खड़े होते हैं। मसलन, जो बात घर पर बोली या कही जा सकती है, उसे बाहर बोलने पर वह गन्दी या खराब कैसे हो जाती है? ऐसे सवाल का क्या जवाब दिया जाए, मुझे भी नहीं सूझता।

***

पार्थो की उम्र के हिसाब से फर्डिनेंड की कहानी थोड़ी भारी लगती थी। लेकिन इस कहानी की वजह से मुझे काफी फायदा हुआ। सोचने के लिए काफी कुछ मिला।

फर्डिनेंड एक बैल था। छोटा होते

हुए भी वह दूसरे बछड़ों के माफिक दौड़ना, उछल-कूद, मस्ती वगैरह नहीं करता था। वो सिर-से-सिर की टक्कर वाला खेल भी नहीं खेलता था। कॉर्क के पेड़ के नीचे इत्मीनान से बैठकर फूलों की खुशबू का लुत्फ लेना उसे पसन्द था। उसकी माँ को कई दफा फर्डिनेंड की फिक्र होने लगती थी लेकिन वो खुश तो है, ऐसा कहकर माँ खुद को तसल्ली देती थी।

फर्डिनेंड बड़ा होने पर एक हट्टा-कट्टा, ताकतवर बैल बना। उसके साथ के सभी बैलों की दिली ख्वाहिश होती कि कोई उन्हें बैलों की लड़ाई के लिए लेकर जाए, जहाँ वे अपना जौहर दिखा सकें। एक बार बैलों की लड़ाई के लिए बैलों को चुनने के लिए पाँच लोग आए। बहुत-से बैल अपनी ताकत दिखाने के लिए दौड़ने लगे। लेकिन फर्डिनेंड को इस सबसे कोई मतलब ही नहीं था। वो कॉर्क के पेड़ के नीचे बैठने जा रहा था। बैठते समय वह गलती से एक भौंरे पर बैठने लगा। भौंरे ने फर्डिनेंड को ज़ोर से चाब दिया। भौंरे के काटने से वह हकबका कर तेज़ी से दौड़ने लगा। चुनाव के लिए आए लोगों ने फर्डिनेंड को चुन लिया और उसे बैलों की दौड़ के मुकाबले के लिए मैदान में उतारा।

बैलों की दौड़ का मुकाबला देखने के लिए आई महिलाओं ने बालों में फूलों की वेणियाँ गूँथी थीं। फर्डिनेंड ने फूलों की वेणियाँ देखीं और मैदान में इत्मीनान से बैठकर फूलों की खुशबू लेने लगा। उसने दिल से तय कर लिया था कि लोग चाहे जो करें, मैं किसी के साथ नहीं लड़ूँगा, किसी को चोट नहीं पहुँचाऊँगा। लोगों की कई कोशिशों के बाद भी फर्डिनेंड मैदान पर शान्त भाव से बैठा रहा। आखिरकार लोगों ने फर्डिनेंड को घर वापस भेज दिया। अब वो अपने पसन्दीदा कॉर्क के पेड़ के नीचे बैठकर फूलों की खुशबू लेता है। वो सच में काफी खुश है।

***

ऐसी संवेदनशील किताबों को पढ़ते हुए हम भी उनमें खो जाते हैं। लेकिन उनमें उठे कुछ मुद्दों पर बच्चों से चर्चा करनी ही पड़ती है। जब हम सिर्योज़ा के बारे में पढ़ रहे थे तब

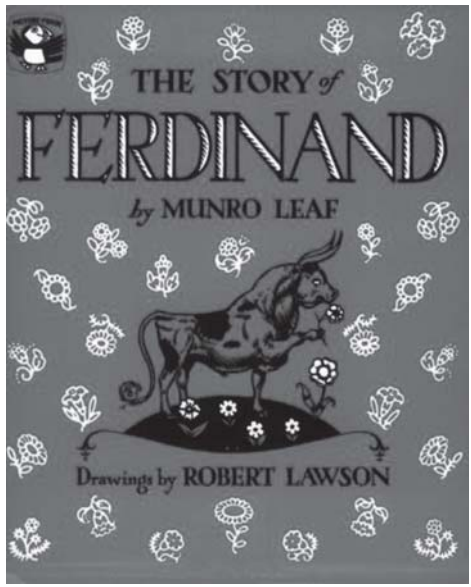

एक प्रसंग सामने आता है कि सिर्योज़ा के माता-पिता उसे बुआ के घर छोड़कर, छोटे भाई को लेकर दूसरे गाँव जा रहे हैं और सिर्योज़ा रोने लगता है। उस समय सिर्योज़ा के पिता कहते हैं, "नहीं, नहीं, रोना मर्दों का काम नहीं है। मुझे यह बिलकुल पसन्द नहीं। मुझे वचन दो कि तुम रोओगे नहीं। देते हो न पक्का वचन!"

"हाँ, देखो मैं एक मर्द की बात पर भरोसा कर रहा हूँ।"

इस पर पार्थो ने पूछा कि बच्चे रोएँ तो चल सकता है क्या? रुलाई क्यों फूटती है? फिर अगले कुछ दिन हम इन्हीं सब पर बातें करते रहे।

एक समय लोग ऐसा मानते थे कि फूटफूट कर रोना, ये औरतों का काम है। मर्द रोते नहीं हैं। यदि मर्द इस तरह से रोते तो इसे हीनभाव से देखा जाता था। इसलिए सिर्योज़ा के पिता ने उसे न रोने के लिए कहा होगा। लेकिन इस बात को गाँठ लगाकर रखने की ज़रूरत नहीं है। अब हम अच्छी तरह से जानते हैं कि मर्द हो या औरत, दोनों ही इन्सान हैं। और इन्सान को जब बहुत दुख हो, बुरा लगे तो रोना एकदम स्वाभाविक क्रिया है। इसका यह भी मतलब नहीं है कि हर छोटी-छोटी बात के लिए रोया जाए। वयस्क लोग थोड़ा कम रोते हैं या सबके सामने रोने से बचते हैं। सिर्योज़ा के पिता भी सिर्योज़ा को बड़ा या वयस्क मान रहे हैं। सबके सामने वो न रोए, यही उनकी अपेक्षा है। जैसे ही सिर्योज़ा को इस बात का अन्देशा होता है कि सबके सामने अब उसकी रुलाई फूट सकती है, वो तुरन्त घर के भीतर चला जाता है।

क्यों ऐसा होता है न कहानी में?

चित्र: राबर्ट लोमन

***

मुझे मेरे बच्चे के साथ गुज़ारने के लिए काफी कम समय मिल पाता है। ऑफिस से आने के बाद जो समय मिलता है उसमें दौड़ने-कूदने-भागने का बिलकुल मन नहीं करता। घर के काम भी होते हैं और दिन भर की थकान पस्त कर देती है। ऐसे समय बैठे-बैठे कुछ खेल, किताबें पढ़ना एकदम मुफीद काम लगता है।

किताबों को पढ़ना और उन पर

बातचीत करना, एक काफी सशक्त विकल्प है। बच्चे एकाग्रता से कहानी वगैरह सुनते हैं, सवालात करते हैं। बच्चों के साथ बातचीत के लिए हमें कई मुद्दे मिलते हैं। बच्चों के साथ पढ़ते हुए हम बड़ों को भी कई बातें स्पष्ट होती हैं या हम उन्हें नए सिरे से समझ पाते हैं। इसलिए मेरा शॉर्टकट अब मेरे लिए संवाद का राजमार्ग बनता जा रहा है।

चित्र: जितेन्द्र ठाकुर

वृषाली वैद्यः पेशे से वकील हैं। 'पालकनीती' पत्रिका से जुड़ी हैं। पुणे में रहती हैं।
मराठी से अनुवादः माधव केलकरः 'संदर्भ' पत्रिका से सम्बद्ध हैं।
यह लेख 'पालकनीती' पत्रिका के अंक अक्टूबर-नवम्बर, 2006 से साभार।